घोषणा पत्रों में विज्ञान की अनदेखी

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

किसी भी पार्टी का चुनाव घोषणा पत्र देखिए, विज्ञान की घोर उपेक्षा ही नज़र आएगी। यह विडंबना ही है कि किसी पार्टी, किसी उम्मीदवार के चुनावी घोषणा पत्र में विज्ञान, टेक्नॉलॉजी, पर्यावरण, कृषि और चिकित्सा (साइन्स, टेक्नॉलॉजी, एनवायर्मेंट, एग्रीकल्चर, मेडिसिन - 'स्टीम') का नाम तक नहीं है। यह चिंता का विषय है। यह अब जानी-मानी बात है कि 'स्टीम' में निवेश ही रोज़गार के अवसर पैदा करता है। एक पार्टी ने तो 10 करोड़ नौकरियों का वायदा किया है। एक अन्य पार्टी ने 'सिंगापुर नुमा' विकास के वायदे किए हैं मगर यह नहीं बताया है कि कैसे। अलबत्ता, हर पार्टी ने यह ज़रूर कहा है कि वह किसी न किसी समुदाय के लिए आरक्षण या सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान करेगी।

ज़्यादा दुख तो तब होता है जब हम 6 दशक पहले की स्थिति यानी 15 चुनाव पहले की स्थिति को देखते हैं। जब स्वतंत्र भारत का जन्म हुआ था तब देश के संस्थापकों ने राष्ट्रीय नीति के तौर पर 'विज्ञान से मित्रता' की थी और 'स्टीम' के औज़ारों का उपयोग करके देश को आधुनिक विकास की राह पर आगे बढ़ाया था। कृषि के विज्ञान ने ही हरित क्रांति का मार्ग प्रशस्त किया था, और चिकित्सा विज्ञान ने हमें चेचक से (और पोलियो से) मुक्ति दिलाई। टेक्नॉलॉजी ने हमें परमाणु शक्ति बनाया।

इस बात को ज़रा उसके संदर्भ में रखकर देखें: उसी समय अफ्रीका और एशिया के 70 से ज़्यादा देश स्वतंत्र हुए थे मगर भारत एकमात्र ऐसा देश है जिसने 'स्टीम' का कारगर उपयोग राष्ट्रीय विकास के लिए किया है। आज हमें एक उभरती अर्थ व्यवस्था माना जाता है। यह आज़ाद देश के संस्थापकों की दूरदृष्टि का ही नतीजा है। क्या यह ज़रूरी नहीं है कि हम विज्ञान के साथ अपनी इस मित्रता को और मज़बूत बनाएं? हम इस बात का ढिंढोरा तो बहुत पीटते हैं कि हम आज दुनिया के बौद्धिक इंजिन या ज्ञान के केंद्र बन गए हैं। तब क्या राजनैतिक दलों को इसे साकार करने का संकल्प व्यक्त नहीं करना चाहिए?

संस्थापकों की विज्ञान से मित्रता की वह भावना कुछ हद तक नज़र आती है, हालांकि काफी कमज़ोर रूप में। मगर विज्ञान के लिए सरकारों का समर्थन काफी उतार-चढ़ावों से भरा रहा है और वह भी सिर्फ उन वैज्ञानिकों व पेशेवर विशेषज्ञों की दूरदर्शिता की बदौलत जो सरकार के विज्ञान सलाहकार रहे हैं। इनकी बदौलत ही हमने अंतरिक्ष में सफलताएं (चंद्रयान, मंगलयान, पीएसएलवी...) हासिल की हैं। हमारे यहां विज्ञान शिक्षा व अनुसंधान के महत्वपूर्ण संस्थान हैं, जैव-टेक्नॉलॉजी के उपयोगी उत्पाद (जैसे टीके वगैरह) हैं, राष्ट्रीय ज्ञान नेटवर्क है, जिसमें ज़बर्दस्त सूचना टेक्नॉलॉजी का उपयोग होता है। मगर ये सारी उपलब्धियां मूलतः कतिपय व्यक्तियों और समर्पित पेशेवर समूहों के दबाव के कारण ही हासिल हुई हैं। प्रधान मंत्री की विज्ञान सलाहकार परिषद ने दो वर्ष पूर्व ही विज्ञान के विकास तथा 'स्टीम' के उपयोग हेतु एक विज़न दस्तावेज़ प्रस्तुत कर दिया था। योजना आयोग ने भी अपना विज़न दस्तावेज़ प्रस्तुत किया है। मगर दुख की बात है कि इन चीज़ों को किसी घोषणा पत्र में स्थान नहीं मिला है।

ऐसा भी नहीं है कि वैज्ञानिक, टेक्नॉलॉजीविद और स्कॉलर्स चुनाव में खड़े नहीं हुए हैं। इस बार के चुनाव में कम से कम दो सूचना विशेषज्ञ, कई सारे चिकित्सा विशेषज्ञ, कुछ शिक्षाविद तथा समाज विज्ञान के विद्वान उम्मीदवार हैं। इनमें से किसी ने भी राष्ट्रीय विकास में 'स्टीम' की भूमिका पर कुछ नहीं कहा है, कम से कम सार्वजनिक रूप से तो कुछ नहीं कहा है। यह दिलचस्प बात है कि कम से एक पार्टी (जो पारदर्शिता, तर्कवाद के हक में है और भ्रष्टाचार के खिलाफ है) ने यह वक्तव्य दिया है कि जीएम अनुसंधान जारी रहना चाहिए, उसे

प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। तत्काल, एक अन्य पार्टी (जिसके लक्ष्य भी वही हैं) ने तय किया कि वह जीएम अनुसंधान को लेकर पहली पार्टी के मत के चलते उसका समर्थन नहीं करेगी। चलो, कम से कम छोटी पार्टियों के स्तर पर जीएम का ज़िक्र तो हुआ। बड़ी पार्टियां तो इन मुद्दों पर चुप्पी साधे हुए हैं।

हर वर्ष जनवरी के पहले सप्ताह में प्रधान मंत्री (वे जिस भी पार्टी के हों) विज्ञान कांग्रेस का उद्घाटन करते हैं और विज्ञान की तरक्की और उसके लिए निवेश बढ़ाने की बात करते हैं। अफसोस की बात है कि यह रिवाज़ एक निरर्थक परंपरा ही रही है और खुद सरकार भी इसे गंभीरता से नहीं लेती। इस मामले में प्रांतीय सरकारें ज़्यादा पारदर्शी रही हैं। कई प्रांत अपने वार्षिक विज्ञान सम्मेलनों का आयोजन करते हैं और मुख्य मंत्री न तो धन देने का वायदा करते हैं और न ही किसी नए कार्यक्रम का। दरअसल, विज्ञान व टेक्नॉलॉजी के लिए 95 प्रतिशत पैसा तो केंद्र सरकार से आता है, जबकि 30 राज्य सरकारें मिलकर शेष 5 प्रतिशत खर्च करती हैं।

परिस्थिति की हास्यास्पदता वर्तमान परिदृश्य में एकदम खुलकर सामने आती है। मैं दो घटनाएं बयान करना चाहूंगा। केंद्रीय वित्त मंत्रालय ने एक झटके में सारे विज्ञान विभागों के बजट में लगभग 30 प्रतिशत की कटौती कर दी है। परिणामस्वरूप, विज्ञान सम्बंधी मंत्रालय और विभाग अनुदान नहीं दे पाए हैं और कहीं-कहीं तो वेतन भुगतान में भी विलंब हुआ है। कई युवा शोधकर्ताओं को मासिक छात्रवृत्ति का भुगतान नहीं हो पाया है।

दूसरी घटना का सम्बंध सरकार द्वारा किए गए वायदों से है। ये वायदे आंध्र प्रदेश को तेलंगाना और सीमांध्र में बांटते समय किए गए। पीड़ित प्रदेशों को राहत पहुंचाने के लिए नए आईआईटी, आईआईएम, तथा केंद्रीय विश्वविद्यालय के वायदे किए गए हैं। क्या ये खोखले वायदे नहीं हैं? इन्हें अपनी फेकल्टी, निदेशक चुनने या बजट निर्धारित करने की कितनी छूट होगी?
(स्रोत फीचर्स)